स्त्री विमर्श

गगनप्रीत कौर
अस्सिटैंट प्रोफेसर : हिन्दी विभाग
गुरू नानक कालेज फार गर्ल्स
श्री मुक्तसर साहिब, पंजाब

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी हैं समाज व प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों ने उसकी बुद्धि को प्रभावित किया। मनुष्य ने सामाजिक विषयों व परिवर्तनों पर, सदियों से चली आ रही रूढ़ियों, परंपराओं का सार्थकता एवं औचित्यहीनता पर अपने विचार प्रकट किए। तर्क वितर्क द्वारा अपनी बात को सिद्ध करने का प्रयास किया और यहीं से विमर्श की उत्पत्ति हुई।

विमर्श शब्द के पर्यायों में तर्क, विवेचना, समीक्षा, परामर्श और उद्वेग शब्द प्रचलित है परन्तु यह शब्द विमर्श के पूर्ण अर्थ को अभिव्यक्त न करके उसके अंगों के रूप में दृष्टिगोचर होते है। विमर्श को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता हैः

"विमर्श का अर्थ हैं – जीवंत बहस। किसी भी समस्या या स्थिति को एक कोण से न देखकर भिन्न मानसिकताओं, दृष्टियों, संस्कारों और वैचारिक प्रतिबद्धताओं का समाहार करते हुए उलट पलटकर देखना। उसे समग्रता से समझने की कोशिश करना, फिर मानवीय संदर्भो में निष्कर्ष प्राप्ति की चेष्टा करना। अलबता प्रयास यहीं रहे कि निष्कर्ष अंतिम निर्णय की तरह थोपे न जाए, वरन् उन्हें ग्रो करने के लिए भरपूर स्पेस और समय दिया जाता रहे"।[1]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि विमर्श एक ऐसी परिचर्चा है जिसमें किसी समस्या पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार किया जाता है और उसमें सुधार हेतु प्रयत्न किए जाते हैं।

हिंदी साहित्य आज इक्कीसवीं सदी में विमर्शो के दौर से गुजरता हुआ दिखाई देता है, युवा विमर्श, विकलांग विमर्श, आदिवासी विमर्श, पर्यावरण विमर्श, स्त्री विमर्श आदि विमर्शो ने हिंदी सहित्य को नई दिशा की ओर अग्रसर किया हैं। पिछले कुछ दशकों से स्त्री विमर्श चर्चा का विषय बन गया है।

स्त्री विमर्श रूढ़ हो चुकी मान्यताओं, परंपराओं के प्रति असंतोष व उससे मुक्ति का स्वर है। स्त्री विमर्श ने हमें पितृसत्तात्मक मूल्यों, दौहरे नैतिक मापदंडों, अंतर्विरोधों को समझने की अंतदृष्टि प्रदान की है। सीमोन द बोउवार, केट मिलट, बैटी फरीडन, देरिदा, लाका ने स्त्री पाठ के प्रश्न को उठाकर विश्व चिंतन में नई बहस को जन्म दिया। इन्होंने पितृक मूल्यों को समस्याग्रस्त ठहराया तथा यह उदघाटित किया कि किस प्रकार धर्म, कानून, नैतिकता, अनुशासन, साहित्य और

कलाए स्त्री विरोधी हैं। "ढोल गंवार सूद्र पसू नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी" कहकर तुलसी जी ने भी उन्हे हेय समझा।

प्रर्गातशील दृष्टिकोण रखने वाले लोगों में भी स्त्री को लेकर सामन्ती मानसिकता मौजूद है। सीमोन द बोउवार ने स्पष्ट किया कि, "पुरूष ने सभ्यता के आदिकाल से ही अपनी शारीरिक शक्ति के कारण अपनी श्रेष्ठता स्थापित की उसने जो धर्म बनाये जिन मूल्यों को गढ़ा, जिन आचरणों को मान्यता दी वे सब उसकी अपनी सुविधा के लिए थे"।[2] इस तरह धर्म, नैतिक मूल्यों ने भी उनका शोषण ही किया। स्त्रियां हाशिए पर फेंकी गई। उन्हें वाणीहीन, अस्तित्वहीन किया गया लेकिन अब वह उस निर्मम शोषण, अन्याय के खिलाफ बोलने लगी है। स्त्री विमर्श केवल साहित्यिक मुद्दा ही नहीं बल्कि सह सांस्कृतिक प्रश्न है जिसमें करोड़ों स्त्रियों की शोषण से मुक्ति छिपी है।

आज शिक्षा के प्रसार, अद्यौगिकीकरण, भूमंडलीकरण के कारण रित्रयां अपनी अस्मिता के प्रति सचेत हुई है। उनका लेखन भी पितृक मर्यादाओं, नैतिकताओं का बहिष्कार करता है। भले ही कुछ स्त्रियां पुरूष वर्चस्व के खिलाफ आवाज उठा रही है परन्तु आज भी उन्हें उत्पीड़न का शिकार होता पड़ता है। कही यौन उत्पीड़त तो कही बलात्कार के रूप में मानसिक उत्पीड़न का शिकार होती है। कई बार तो रोजगार देने के बदले उनका दैहिक शोषण होता है। दहेज प्रथा, ससुराल में स्त्रियों पर होते अत्याचारों से त्रसद कुछ लोग बेटी को पैदा ही नही करना चाहते क्योंकि वह उसे बोझ ही समझते है।

स्त्रियों पर अत्याचार उनके अशिक्षित होने तथा आर्थिक तौर पर पुरूष पर आश्रित होने से भी होते हैं। अगर वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी हो तो उन पर अत्याचार नहीं होगे या अपेक्षाकृत कम होगे। दूसरा शिक्षा के अभाव कारण भी स्त्रियां पुरूषवादी सोच और धार्मिक अंधविश्वासों से जकड़ी हुई है। बलात्कार जैसे दुष्कर्म का शिकार होने पर भी वह स्वयं को ही दोषी मानने लगती है। उसे परिवार, समाज के लोगों की उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है। "खुद औरत ने भी अपनी देह को अमानत जैसा बना लिया और उस अमानत की ख्यानत के ख्याल के कारण जरा सी असावधानी या जबर्दस्ती से वह खुद को ही कटघरे में खड़ा करने की अभ्यस्त बना दी गई। स्त्री को इस अपराध बोध से मुक्ति पानी है। इसके लिए उसे अपने ऊपर थोपी हुई शुचिता और सतीत्व को उतार फेंकरना जरूरी है, तभी वह बलात्कार का मुकाबला करने में सक्षम होगी।"[3]

आज अनेक समाजसेवी महिला संगठन, महिला राजनीतिज्ञ और प्रर्गातिशील विचारक स्त्री के संबंध में प्राचीन धार्मिक, सामजिक मान्यताओं का खण्डन मण्डन कर रहे हैं। हमें ग्रामीण स्तर से लेकर शिक्षा कार्यक्रमों में स्त्रियों की भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी, उन्हें रोजगार के अवसर प्रदान करने होगे तभी उनमें आत्मसम्मान जगेगा जो उन्हे शोषण के विरूद्व प्रेरित करेगा।

संदर्भग्रन्थ सूची

1 मीरा गौतम, अंतिम दो दशकों को हिंदी साहित्य, पृ. 99

2 सीमोन द बोउवार, स्त्री उपेक्षिता, पृ. 65

3 रमणिका गुप्ता, स्त्री विमर्शः कलम और कुदाल के बहाने, पृ. 45–46